समेति

कृषि पशुपालन एवं सहकारिता विभाग, झारखण्ड सरकार

झारखण्ड सरकार GOVERNMENT OF JHARKHAND सत्यमेव जयते

तेलहन फसलों की उन्नत कृषि प्रणाली

राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन प्रसार-सह-प्रशिक्षण संस्थान (समेति), झारखण्ड

समेति भवन, कृषि भवन परिसर, काँके रोड, राँची, झारखण्ड
Website: www.sameti.org, E-mail: sametijharkhand@rediffmail.com

कृषि पशुपालन एवं सहकारिता विभाग, झारखण्ड सरकार

तेलहन फसलों की उन्नत कृषि प्रणाली

राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन प्रसार-सह-प्रशिक्षण
संस्थान (समेति), झारखण्ड
समेति भवन, कृषि भवन परिसर, काँके रोड, राँची, झारखण्ड
Website: www.sameti.org, E-mail: sametijharkhand@rediffmail.com

विषय सूची

क्र. स.	विषय	पृष्ठ सं.
1.	सरसों की उन्नत कृषि प्रणाली	1
2.	मूंगफली की उन्नत कृषि प्रणाली	12
3.	सूरजमुखी की उन्नत कृषि प्रणाली	16
4.	तिल की उन्नत कृषि प्रणाली	19
5.	अलसी की उन्नत कृषि प्रणाली	22

आभार- **श्रीमती रजनी किरण लकड़ा**
तेलहन वैज्ञानिक
सस्य विज्ञान विभाग
बिरसा कृषि विश्व विद्यालय, काँके, राँची

सरसों की उन्नत कृषि प्रणाली

सरसों क्रूसीफेरी (ब्रैसीकेसी) कुल का द्विबीजपत्री, एकवर्षीय शाक जातीय पौधा है। इसका वैज्ञानिक नाम ब्रेसिका कम्प्रेसटिस है। पौधे की ऊँचाई 1 से 3 फुट होती है। इसके तने में शाखा-प्रशाखा होते हैं। प्रत्येक पर्व सन्धियों पर एक सामान्य पत्ती लगी रहती है पत्तियाँ सरल, एकान्त, बीणाकार होती हैं जिनके किनारे अनियमित, शीर्ष नुकीले, शिराविन्यास जालिकावत होते हैं। इसमें पीले रंग के सम्पूर्ण फूल लगते हैं जो तने और शाखाओं के ऊपरी भाग में स्थित होते हैं। फूलों में ओवरी सुपीरियर, लम्बी, चपटी और छोटी वर्तिकावाली होती है। फलियाँ पकने पर फट जाती है और बीज जमीन पर गिर जाते हैं। प्रत्येक फली में 8-10 बीज होते हैं। उपजाति के आधार पर बीज काले अथवा पीले रंग के होते हैं।

सरसों एवं राई की गिनती भारत की प्रमुख तीन तिलहनी फसलों (सोयाबीन, मूंगफली एवं सरसों) में होती है जो देश में आई पीली क्रान्ति के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार है। सरसों रबी में उगाई जाने वाली प्रमुख तिलहन फसल है। इसकी खेती सिंचित एवं संरक्षित नमी वाले बरानी क्षेत्रों में की जाती है।

पशु आहार के रूप में बीज, तेल एवं खल्ली को काम में ले सकते हैं क्योंकि इनका प्रभाव शीतल होता है जिससे ये कई रोगों की रोकथाम में सहायक सिद्ध होते हैं इसकी खल्ली में लगभग 4 से 9 प्रतिशत नेत्रजन 2.5 प्रतिशत फास्फोरस एवं 1.5 प्रतिशत पोटाश

होता है। अतः कई देशों में इसका उपयोग खाद की तरह किया जाता है। इसके सूखे तनों को ईंधन के रूप में उपयोग में लिया जाता है। सरसों के बीज में तेल की मात्रा 30 से 48 प्रतिशत तक पायी जाती है।

झारखण्ड की जलवायु एवं मिट्टी तोरिया-राई की खेती हेतु काफी उपयुक्त है। इस प्रदेश में तोरिया-राई फसल समूह की मुख्यतः तोरिया तथा राई की खेती की जाती है। कहीं-कहीं पीली सरसों की भी खेती होती है। झारखण्ड के तेलहनी फसलों में सरगुजा एवं तिल के बाद तोरिया-राई का स्थान है।

जलवायु

भारत में सरसों की खेती शरद ऋतु में की जाती हैं इस फसल को 18 से 25°C तापमान की आवश्यकता होती है। सरसों के पौधे की बढ़ोतरी के लिए उच्च तापमान की अनुकूल है पर फूल आने के बाद से फली बनने तक न्यूनत्तम तापमान की आवश्यकता होती है। सरसों की फसल के लिए फूल आते समय वर्षा, अधिक आर्द्रता एवं वायुमण्डल में बादल छाये रहना अच्छा नहीं रहता है अगर इस प्रकार का मौसम होता है तो फसल पर माहू या चैपा का अधिक प्रकोप हो जाता है।

उन्नत किस्में :

1. तोरिया

- **पी.टी 303 :-** यह 85-90 दिनों में पककर तैयार होती है तथा इसकी उपज क्षमता सिंचित अवस्था म्रें 6-7 क्विं / हे. तथा असिंचित अवस्था में 3-4 क्विं / हे. है। तेल की प्रतिशत्ता लगभग 40-41% है।
- **तपेश्वरी -** फसल अवधि 90-95 दिन है।
- **उपज क्षमता सिंचित -** 8-9 क्विं./ हे.
- **असिंचित -** 4-5 क्विं / हे. है। तथा तेल की मात्रा 38-39: है।

2. राई

	राई	तैयार होने की अवधि	उपज क्षमता (क्विं / हे.)		तेल की मात्रा (%)
		दिन	असिंचित	सिंचित	
1	शिवानी	100 - 105	7 - 8	10 - 12	40 - 41
2.	पूसा बालड	115 -120	7 - 9	12 - 14	41 - 42
3.	एन. आर.सी.एच.बी-101	110 - 115	7 - 8	11 - 13	38 -39
4.	पूसा मस्टर्ड 25	105 - 110	6 - 7	10 -11	39 - 40
5.	बिरसा भामा सरसों -1	114 - 121	9 - 10	16 - 18	39 - 42

पीली सरसों

एन.आर.सी.वाई.एस - 05.02 - 110 - 115 दिनों की फसल है तथा मौसत उपज - असिंचित अवस्था में 4 - 5 क्विं / हे. है तथा सिंचित अवस्था में 7 - 9 क्विं / हे. है। इसमें तेल की मात्रा 42 - 43% है।

खेत का चुनाव एवं तैयारी

सरसों की अच्छी उपज के लिए समतल एवं अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट से दोमट मिट्टी उपयुक्त रहती है, लेकिन यह लवणीय एवं क्षारीयता से मुक्त हो। क्षारीय भूमि में उपयुक्त किस्मों का चुनाव करके भी इसकी खेती की जा सकती है। जहाँ की मृदा क्षारीय हो वहाँ प्रति तीसरे वर्ष जिप्सम 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। जिप्सम की आवश्यकता मृदा पी.एच. मान के अनुसार भिन्न हो सकती है। जिप्सम को मई-जून में जमीन में मिला देना चाहिए। सरसों की खेती बरानी एवं सिंचित दोनों ही दशाओं में की जाती है। सरसों के लिए भुरभुरी मृदा की आवश्यकता होती है। अम्लीय मिट्टी को सुधारने के लिए चूना / डोलोमाइट का चूर्ण 3 - 4 क्विं / हे. की दर से बुआई के समय मतारों में डालकर मिट्टी में मिला देना चाहिए।

सिंचित क्षेत्रों में पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और उसके बाद तीन-चार जुताईयाँ तावेदार हल से करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद खेत में पाटा लगाना चाहिए जिससे खेत में ढेले न बनें। बुआई से पूर्व अगर भूमि में नमी की कमी हो तो जोत में पलेवा करने के बाद बुआई करें। फसल बुआई से पूर्व जोत खरपतवार से रहित होनी चाहिए। बरानी क्षेत्रों में प्रत्येक बरसात

के बाद तवेदार हल से जुताई करनी चाहिए जिससे नमी का संरक्षण हो सके। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाना चाहिए जिससे कि मृदा में नमी बनी रहे। अंतिम जुताई के समय 1.5 प्रतिशत क्यूनॉलफॉस 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से मृदा में मिला दें, ताकि भूमिगत कीड़ों से फसल की सुरक्षा हो सके। साथ ही उत्पादन बढ़ाने हेतु 2 से 3 किलोग्राम एजोटोबैक्टर एवं पी.ए.बी. कल्चर की 50 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद या वर्मीकल्चर में मिलाकर अंतिम जुताई से पूर्व खेत में ड़ालना चाहिए।

बोआई का समय

सरसों की बुवाई के लिए उपयुक्त तापमान 25° से 26° तक रहता है। तोरिया जो जल्दी तैयार हो जाती है का बोआई के लिए उपयुक्त समय 20 सितम्बर से 10 अक्टूबर है। राई जो देर से पकती है पूरे अक्टूबर से 15 दिसम्बर में सफलतापूर्वक लगायी जा सकती है। बोआई में देरी होने से फसल की उपज क्षमता तथा बीजों में तेल की मात्रा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। फसलों पर कीट एंव रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।

बोआई

- हल के पीछे या सीड ड्रील द्वारा 30 से.मी. लाईन की दूरी पर इसकी बोआई करनी चाहिए।
- बीज जमीन में 5 से.मी. से ज्यादा गहराई पर नहीं जाना चाहिए अन्यथा पौधे ठीक से नहीं उग पाते हैं।
- संभव हो तो लाईनों की दिशा, उत्तर- दक्षिण रखें। ऐसा करने से सर्दियों में सभी पौधे को सूर्य की रोशनी ठीक प्रकार से मिलती है, जिससे पौधे अपना भोजन अच्छे से बना पाते हैं तथा उत्पादन अच्छा मिलता है।
- 5-6 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टयर की दर से लगाना उपयुक्त होता है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता बनाये रखने के लिए उर्वरकों का संतुलित उपयोग बहुत आवश्यक होता है संतुलित उर्वरक उपयोग के लिए मृदा परीक्षण आवश्यक होता है। मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों की मात्रा निर्धारित की जा सकती है। सरसों की फसल नेत्रजन के प्रति अधिक सवं दे नशील होती है व इसकी आवश्यकता भी अधिक मात्रा में होती है असिंचित क्षेत्रों में सरसों

की फसल में 40 किलोग्राम नेत्रजन, 90 किलोग्राम फास्फोरस, 20 किलोग्राम पोटाश, 20 किलोग्राम सल्फर की आवश्यकता होती है जबकि सिंचित फसल को 80 किलोग्राम नेत्रजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस, 40 किलोग्राम पोटाश व 20 किलोग्राम सल्फर की आवश्यकता होती है। नेत्रजन की पूर्ति हेतु फॉस्फोरस की पूर्त्ति हेतु सिंगल सुपर फॉस्फेट का उपयोग करना चाहिए क्योकि इसमें सल्फर भी उपलब्ध है।

तोरी के लिए उर्वरक की मात्रा 50 किलों नेत्रजन 25 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 25 कि.ग्रा. पोटाश तथा 20 कि.ग्रा सल्फर प्रति हे. उपयुक्त है।

सिंचित क्षेत्रों में नेत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस पोटाश एवं सल्फर की पूरी मात्रा को बुआई के समय, बीज से 5 से.मी. नीचे मृदा में देना चाहिए तथा नेत्रजन की शेष आधी मात्रा को पहली सिंचाई के साथ देना चाहिए। असिंचित क्षेत्रों में उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा बुआई के समय खेत में डाल देनी चाहिए।

सरसों की फसल से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों का उपयोग अतिआवश्यक होता है। जिंक की कमी वाली मृदा में जिंक डालने से करीब 25-30 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि होती है। जिंक की पूर्ति हेतु भूमि में बुआई से पहले 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर अकेले या जैविक खाद के साथ प्रयोग किया जा सकता है। अगर खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई दे तो 05 प्रतिशत जिंक सल्फेट व 0.25 प्रति बुझे हुए चूने (200 लीटर पानी में 1 किलोग्राम जिंक सल्फेट तथा बुझे हुए चूने) का घोल बनाकर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। बोरोन की कमी वाली मृदाओं में 10 किलोग्राम बोरेक्स प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के पूर्व मृदा में मिला दें।

थायोयूरिया का प्रयोग

परीक्षणों के ज्ञात हुआ है कि थायोयूरिया के प्रयोग से सरसों की उपज को 15 से 20 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है। थायोयूरिया में उपस्थित सल्फर के कारण पौधों की आन्तरिक कार्यिकी में सुधार होता है। थायोयूरिया में 45 प्रतिशत गंधक एवं 36 प्रतिशत नेत्रजन होता है। सरसों की फसल में 0.1 प्रतिशत थायोयूरिया (500 लीटर पानी में 500 ग्राम थायोयूरिया) के दो पर्णीय छिड़काव उपयुक्त पाये गये हैं। पहला छिड़काव फूल आने के समय (बुआई के 50 दिन बाद) एवं दूसरा छिड़काव फलियां बनते समय करना चाहिए।

जैविक खाद

असिंचित क्षेत्रों में 4-5 टन प्रति हेक्टेयर तथा सिंचित क्षेत्रों में 8-10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद बुआई के एक माह पूर्व खेत में डालकर जुताई कर अच्छी तरह मृदा में मिला दें। गोबर की खाद में मुख्य पोषक तत्वों के साथ सूक्ष्म पोषक तत्व भी पाये जाते हैं जिससे पौधों को उचित पोषण प्राप्त होता है। गोबर की खाद से मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है एवं मृदा संरचना में सुधार होता है। अतः भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए जैविक खादों का उपयोग आवश्यक होता है। सरसों की फसल से पूर्व हरी खाद का भी प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए वर्षा शुरु होते ही ढैंचा की बुआई करें व 45-50 दिन बाद फूल आने से पहले मृदा में दबा देना चाहिए। सिंचित एवं बरानी क्षेत्रों में पी.एस.बी. (10-15 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) एवं एजोटोबैक्टर से बीजोपचार भी लाभदायक रहता है, इससे नेत्रजन एवं फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है व उपज में वृद्धि होती है।

झारखण्ड के लिए अनुशंसित

- अच्छे से सड़कर तैयार कम्पोस्ट को 2-3 टन/हे. की दर से प्रयोग करने पर मिट्टी के संरचना तथा जलधारण क्षमता अच्छी हो जाती है।
- सिंचित अवस्था में तोरिया-राई लगाने हेतु उर्वरकों की बढ़ी हुई मात्रा का काफी अच्छा परिणाम मिलता है। झारखण्ड में 220 किलोग्राम नेत्रजन प्रति हेक्टेयर देने से सर्वाधिक उपज प्राप्त हुआ है।
- प्रयोग के परिणाम को देखते हुए उर्वरकों की निम्नलिखित मात्रा झारखण्ड के किसानों के लिए उपयुक्त है :-

  तोरिया - 30:20:20:20 (नेत्रजन:फास्फोरस:पोटाश:सल्फर) किलोग्राम प्रति हेक्टेयर। सल्फर तेलहनी फसलों के लिए आवश्यक है यह तेल की मात्रा तथा दानों के आकार को बढ़ाता है तेलहनी फसलों में फॉस्फोरस की मात्रा को सिंगल सुपर फॉस्फेट से देने पर आवश्यक सल्फर की मात्रा भी पूरी हो जाती है।

  राई - 40:20:20:20 (नेत्रजन:फास्फोरस:पोटाश:सल्फर) किलोग्राम प्रति हेक्टेयर (असिंचित अवस्था)।

  इसकी पूर्ति के लिए यूरिया - 87, सिंगल सुपर फॉस्फेट-125, म्यूरेट ऑफ पोटास- 34 किलोग्राम/हे. देना चाहिए।

विरलीकरण

पौधों से पौधों की दूरी 10 से.मी. करने हेतु बोआई के 10-15 दिनों बाद तोरिया में तथा 15-20 दिनों के बाद राई में उगे हुए कमजोर पौधों को निकाल देना चाहिए। इस प्रक्रिया से सभी बचे हुए पौधों को ठीक से खुराक मिलती है तथा पौधे स्वस्थ रहते हैं।

इस प्रक्रिया में यदि किसान देर करते हैं तो उनके उत्पादन में बहुत ज्यादा कमी हो जाती है। झारखण्ड के किसानों में प्रायः यह देखा गया है कि ''साग'' की लालच में थीनिंग की प्रक्रिया काफी देर से करते हैं। अतः उत्पादन काफी कम हो जाता है।

सिंचाई

सरसों की खेती के लिए 4 - 5 सिंचाई पर्याप्त होती है। यदि पानी की कमी हो तो चार सिंचाई पहली बुआई के समय, दूसरी शाखाएँ बनते समय (बुआई के 25-30 दिन के बाद), तीसरी फूल प्रारम्भ होने के समय (45-50 दिन) तथा अंतिम सिंचाई फली बनते समय (70-80 दिन बाद) की जाती है। यदि पानी उपलब्ध हो तो सिंचाई दाना पकते समय बुआई के 100-110 दिन बाद करनी लाभदायक होती है। सिंचाई फव्वारे विधि द्वारा करनी चाहिए।

फसल चक्र

फसल चक्र का अधिक पैदावार प्राप्त करने, भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखने तथा भूमि में कीड़े, बीमारियों एवं खर-पतवार कम करने में महत्वपूर्ण योगदान होता है। सरसों की खेती के लिए पश्चिमी क्षेत्र में मूंग-सरसों, ग्वार-सरसों, बाजरा-सरसों एक वर्षीय फसल चक्र तथा बाजरा-सरसों-मूंग/ग्वार-सरसों दो वर्षीय फसल चक्र उपयोग में लिये जा सकते हैं। बरानी क्षेत्रों में जहाँ केवल रबी में फसल ली जाती हो वहाँ सरसों के बाद चना उगाया जा सकता है।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार फसल के साथ जल, पोषक तत्वों, स्थान एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। प्रारंभिक अवस्था में अगर खरपतवार न नष्ट किये जाएँ तो फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। गर्मियों में अच्छी तरह गहरी जुताई करने से मिट्टी में पलने वाले कीट, खरपतवार के बीज, फफूंदी व अन्य हानि पहुँचाने वाले परजीवी नष्ट या कम हो जाते हैं। खरपतवारों को खेत से निकालने और नमी संरक्षण के लिए बुआई के 25 से 30 दिन बाद निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवारों के कारण सरसों की उपज में 60 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है।

खरपतवार नियंत्रण के लिए खुरपी एवं हैण्ड हो का प्रयोग किया जाता है। रसायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए फ्लुक्लोरेलिन (45 ई.सी.) की 2 लीटर सक्रिय तत्व/हेक्टेयर (2.2 लीटर दवा) की दर से 300 लीटर पानी में मिलाकर बुआई के तुरन्त बाद (बुआई के 1-2 दिन के अन्दर) छिड़काव करना चाहिए।

कीट एवं रोग प्रबंधन

सरसों की उपज को बढ़ाने तथा उसे टिकाऊ बनाने के मार्ग में नाशक जीवों और रोगों का प्रकोप एक प्रमुख समस्या है। इस फसल को कीटों एवं रोगों से काफी नुकसान पहुँचता है, जिससे इसकी उपज में काफी कमी हो जाती है। यदि समय रहते इन रोगों एवं कीटों का नियंत्रण कर लिया जाए तो सरसों के उत्पादन में बढ़ोत्तरी की जा सकती है चेंपा या माहू, आरामक्खी, चितकबरा कीट, लीफ माइनर, बिहार हेयरी केटरपिलर आदि सरसों के मुख्य नाशी कीट हैं। काला धब्बा, सफेद रतुआ, मृदुरोमिल आसिता, चूर्णल आसिता एवं तना गलन आदि सरसों के मुख्य रोग हैं।

सरसों के प्रमुख कीट

चेंपा, माहु या लाही - सरसों में माहू पंखहीन या पंखयुक्त हल्के स्लेटी या हरे रंग के 1.5-3.0 मि.मी. लम्बे चुभने एवं चूसने मुखांग वाले छोटे कीट होते हैं इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ पौधों के कोमल तनों, पत्तियों, फूलों एवं फलियों से रस चूसकर उसे कमजोर एवं छतिग्रस्त तो करते हैं साथ-साथ रस चूसते समय पत्तियों पर मधुस्राव भी करते है। इस मधुस्राव पर काले कवक का प्रकोप हो जाता है, तथा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित हो जाती है। इस कीट का प्रकोप दिसम्बर-जनवरी से लेकर मार्च तक बना रहता है।

जब फसल में कम से कम 10 प्रतिशत पौधों की संख्या चेंपा या लाही से ग्रसित हो व 26-28 चेंपा या लाही/पौधा हो तब इमिडाक्लोरप्रिड 17.8 एस.एल. 0.5

लीटर द्रव्य की 1 लीटर मात्रा को 300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर में छिड़काव करना चाहिए। यदि दोबारा से कीट का प्रकोप हो तो 15 दिन के अंतराल से पुनः छिड़काव करना चाहिए।

इसके प्रबन्धन के लिए :-

1. माहु के प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण करना चाहिए।
2. प्रारम्भ में प्रकोपित शाखाओं को तोड़ कर भूमि में गाड़ देना चाहिए।
3. माहू से फसल को बचाने के लिए कीटनाशी 17.8 एस.एल. 0.5 लीटर/ हेक्टेयर की दर से 300 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव सुबह या सायंकाल करना चाहिए।

आरा मक्खी : इस कीट की रोकथाम हेतु मालाथियान 50ः ई.सी. मात्रा को 300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर में छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर दोबारा छिड़काव करना चाहिए।

पेन्टेड बग या चितकबरा कीट : इस कीट की रोकथाम हेतु 20-25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से 1.5 प्रतिशत क्यूनालफॉस चूर्ण का भुरकाव करें। उग्र प्रकोप के समय मालाथियान 50ः ई. सी. की 500 मि.ली. मात्रा को 300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें।

बिहार हेयरी कटे रपिलर : इसकी रोकथाम हेतु डाईक्लोरभाष की 0.5 लीटर मात्रा को 300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें।

सरसों के प्रमुख रोग

सफेद रतुवा या श्वेत किट्ट - फसल में रोग के लक्षण दिखाई देने पर डाइमोथोएट 30: ई. सी. या रिडोमिल एम.जेड.72 डब्लू.पी. फफूँदनाशी के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15-15 दिन के अन्तर पर करने के सफेद रतुआ बचाया जा सकता है।

काला धब्बा या पर्ण चित्ती - इस रोग की रोकथाम हेतु आईप्रोडियॉन 50: ई.सी. अथवा मैन्कोजेब (डाइथेन एम-45) फफूंदनाशी के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देने पर 15-15 दिन के अन्तर पर अधिकतम तीन छिड़काव करें।

चूर्णिला आसिता - चूर्णिला आसिता रोग की रोकथाम हेतु घुलनशील सल्फर 80: या डिनोकेप 48: की वांछित मात्रा का घोल बनाकर रोग के लक्षण दिखाई देने पर छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 15 दिन बाद पुनः छिड़काव करें।

मृदुरोमिल आसिता - सफेद रतुआ रोग के प्रबंधन द्वारा इस रोग का भी नियंत्रण हो जाता है।

तना गलन - कॉपरआक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) फफूंदीनाशक का छिड़काव दो बार फूल आने के समय 20 दिन के अन्तराल (बुआई के 50वें व 70वें दिन) पर करने से रोग का बचाव किया जा सकता है।

फसल कटाई

सरसों की फसल फरवरी-मार्च तक पक जाती है। फसल की उचित पैदावार के लिए जब 75 प्रतिशत फलियाँ पीली हो जायें तब ही फसल की कटाई करें क्योंकि अधिकतर किस्मों में इस अवस्था के बाद बीज भार तथा तेल प्रतिशत में कमी हो जाती है। इस फसल में उचित समय पर कटाई करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि यदि समय पर कटाई नहीं की जाती है तो फलियाँ चटकने लगती

है एवं उपज में 5 से 10 प्रतिशत की कमी आ जाती है। सरसों की फसल में दानों का बिखराव रोकने के लिए फसल की कटाई सुबह के समय करनी चाहिए क्योंकि रात की ओस से सुबह के समय फलियाँ नम रहती है। तथा बीज का बिखराव कम होता है। कटाई के समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि सत्यनाशी खरपतवार का बीज, फल के साथ न मिलने पाए नहीं तो इस फसल के दूषित तेल से मनुष्य में ड्रोपसी नामक बीमारी हो जाएगी। सरसों की केवल टहनियों को काटकर बंडलों में बाँधकर खलियान में पहुँचा दें एवं साथ दिन तक फसल को सुखाने के बाद दौनी कर बीज अलग कर लें। तथा ओसाई द्वारा साफ कर लें।

फसल मड़ाई (गहाई)

जब बीजों में औसतन 12-20 प्रतिशत आर्द्रता हो जाए तब फसल की गड़ाई करनी चाहिए। बीज निकालने के बाद उनको साफ करके बोरों में भर लेने एवं 8-9 प्रतिशत नमी की अवस्था में सूखे स्थान पर भण्डारण करें।

मूंगफली की उन्नत कृषि प्रणाली

मूँगफली खरीफ की एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है। यह खाद्य तेल का बहुत अच्छा स्रोत है। हमारे देश में मूँगफली का उपयोग तेल (80 प्रतिशत), बीज (12 प्रतिशत), घरेलू उपयोग (6 प्रतिशत) एवं निर्यात (2 प्रतिशत) के रूप में होता है। मूँगफली के दानों में 45 प्रतिशत से अधिक तेल होता है। इसके अतिरिक्त इसके दानों में 26 प्रतिशत प्रोटीन और 10.2 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है। तेल निकालने के बाद बची हुई खली भी एक पौष्टिक पशु आहार एवं कार्बनिक खाद के रूप में काम आती है। इसके अलावा मूँगफली की फसल वातावरण के नाइट्रोजन को जमीन में स्थिर का भूमि की उर्वरक शक्ति बढ़ाती है।

झारखण्ड में मूँगफली की खेती की काफी संभावनायें हैं। पिछले कुछ वर्षों में इस क्षेत्र में मूँगफली की खेती की जाने लगी है। परन्तु किसान उन्नत कृषि तकनीक के जानकारी के अभाव में अच्छी फसल नहीं ले पा रहे हैं। फसल की अच्छी पैदावार हेतु विभिन्न कृषि प्रक्रियाओं को अपनाकर खेती करना आवश्यक है।

जलवायु तथा तापमान

मूंगफली की खेती उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले प्रदेश में की जाती है। पौधे के बढ़ोतरी और विकास के लिए गर्मी की आवश्यकता होती है। इसकी खेती के लिए 60 से 130 सें. मी. वर्षा काफी होती है। पौधों के अंकुरण के लिए 15 डिग्री तापमान की आवश्यकता होती है।

उन्नत प्रभेद

अच्छी पैदावार हेतु उन्नत एवं अनुशंसित किस्मों का प्रयोग आवश्यक होता है।

ए. के. 12-24 : यह गुच्छा वाली अगात किस्म है एवं 15-17 क्विंटल/हे. की उपज देती है। यह किस्म 100-110 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसमें 46 प्रतिशत तेल पाया जाता है।

जी.जी.-2 : यह गुच्छा वाली अगात किस्म है। इसकी फलियों की उपज लगभग 20-22 क्विंटल/हे. है। यह 105-108 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसमें तेल की मात्रा 48-50 प्रतिशत होती है।

बिरसा मूँगफली-2 : यह किस्म 22-24 क्विंटल/हे. की उपज देती है तथा 117 से 120 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसमें तेल की मात्रा 48% होती है।

बिरसा मूँगफली-3 : यह अति उपजशील किस्म है जो लगभग 18-20 क्विंटल/हे. की उपज देती है। यह किस्म 120-125 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसमें तेल की मात्रा 46-48% होती है।

राज मूँगफली - 2 : यह 120 दिनों में तैयार होती है। इसकी औसत उपज 14.80 क्विं/हे. है तथा इसमें तेल की मात्रा 46% प्रतिशत है।

जे.एस.पी. - 48 : यह 121 दिनों की फसल है। इसकी औसत उपज 15.57 कि./है तथा तेल की मात्रा 48% पायी जाती है।

बिरसा मूंगफली - 4 : फसल की अवधि 115-120 दिन है। इसकी औसत पैदावार 20-22 क्विं/हे. होती है। इसमें 50.78% तेल पायी जाती है।

जी.जे.जी.-19 : यह 122 दिन की फसल है तथा इसकी औसत उपज 18.76 क्विं / हे. है। इसमें 47% तेल पायी जाती है।

जी.जे.जी.-18 : फसल अवधि 115-120 दिन है तथा औसत उपज 15.17 क्विं/हे. है। तेल की मात्रा 45-48% पायी जाती है।

बिरसा बोलड : इसकी परिपकवता की अवधि 125-130 दिन है। उपज क्षमता 20-22 क्विं./हे. तथा इसमें तेल की मात्रा 47 -49% है।

भूमि का चुनाव

मूँगफली की खेती के लिये हल्की बलुआही मिट्टी जिसमें जल का अच्छा निकास हो, उपयुक्त होती है। ऐसी भूमि का पी. एच. मान 6.5 से 7.0 तक होना चाहिये। भारी और कड़ी मृदा इसकी खेती के लिये अनुपयुक्त होती है।

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी मई के महीने में करें। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके 2-3 बार हैरो चलावे जिससे मिट्टी भुरभुरी हो जाए। तत्पश्चात पाटा चलाकर खेत समतल कर लेवें जिससे मृदा में नमी संरक्षित रहती है। बोआई पूर्व भूमि उपचार आवश्यक है। मूँगफली की फसल में दीमक अधिक लगती है। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप हो वहाँ लिण्डेन घूल 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर की दर से बोआई पूर्व खेत में मिला देना चाहिए।

बोआई

सामान्यतः खरीफ मूँगफली की बोआई जून के द्वितीय सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह के मध्य की जाती है। गुच्छा वाली किस्मों के लिये कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. और पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखनी चाहिये जबकि अन्य किस्मों (फलने वाली) में कतार से कतार की दूरी 45 से.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 15 सें.मी. रखनी चाहिए।

बीज दर व बीजोपचार

1. कैलने वाले किस्मों के किए 70-75 कि.ग्रा./हे.
2. गुच्छे वाले किस्मों के लिए - 80-90 कि.ग्रा. / हे.
3. फैलने वाले बड़े दानों के लिए जैसे बिरसा बोल्ड - 120-125 कि.ग्रा./हे.

मूँगफली की अगात किस्मों के बोआई के लिये प्रति हेक्टर 75-80 कि.ग्रा. बीज (गिरी) की आवश्यकता होती है जबकि मध्य गुच्छा किस्मों के लिये 80-90 कि. ग्रा. बीज की जरूरत होती है।

सर्वप्रथम बोआई के पहले बीज को 3 ग्राम थायरम या 2 ग्राम मेन्कोजेब प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। दीमक की रोकथाम के लिये क्लोरोपायरिफॉस 20 ई. सी. 6 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज या एसीफेट 75 एस.पी. 6 ग्रा./कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार कर बोआई करें। मूँगफली के बीज को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना लाभदायक रहता है। ध्यान रहे बीजोपचार उपर्युक्त क्रम में करें, यानि पहले फफूंदनाशी से, उसके बाद कीटनाशी एवं अन्त में राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार करें। राइजोबियम कल्चर से बीज के उपचार की विधि पैकेट पर लिखी होती है।

खाद एवं उर्वरक

3 वर्ष में एक बार 10 टन प्रति हेक्टर गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट बुआई के 2-3 सप्ताह पूर्व खेत में मिला दें। उर्वरक के रूप में नेत्रजन फॉस्फोरस, पोटाश एवं सल्फर क्रमशः 25:50:20:20 क्विं/ हे. की दर से डालना चाहिए। नेत्रजन यूरिया के रूप में फॉस्फोरस सिंगल सुपर - फॉस्फेट के रूप में एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय कतार में डालनी चाहिए। झारखण्ड की मिट्टी में गंधक व बोरोन की कमी है। यदि फॉस्फोरस सिंगल- सुपर -फॉस्फेट

के रूप में एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय कतार में डालनी चाहिए। झारखझड की मिट्टी में गंधक व बोरोन की कमी है। यदि फॉस्फोरस को सिंगल सुपर फॉस्फेट के रूप में लेते हैं तो फसल को गंधक उपलब्ध हो जाता है। बोरोन 1.5 कि.ग्रा./हे. या बोरोन 15 कि.ग्रा./हे. की दर से खेतो में डालनी चाहिए। नाइट्रोजन की पूरी मात्रा बोआई से पहले यूरिया द्वारा देनी चाहिए। फॉस्फोरस का सबसे अच्छा स्रोत सिंगल सुपर फास्फेट है। 375 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट काम में लेने से फसल को 45 कि.ग्रा. गन्धक भी उपलब्ध हो जाता है।

सिंचाई

मूँगफली की खेती वर्षा पर निर्भर है, परन्तु सूखा पड़ने की स्थिति में आवश्यकतानुसार 1-2 सिंचाई करनी चाहिए। विशेषकर फूल आने की अवस्था एवं दाना बनते समय यदि मृदा में नमी हो तो सिंचाई अवश्य करें।

खरपतवार नियंत्रण

बुआई के 1-2 दिन के अन्दर तृण नाशक दवा पेन्डामिथालिन 1.5 से 2 मि. ली. दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से आरंमिक अवस्था में खेतों को खरपतवार मुक्त रखा जा सकता है।

ध्यान रहे दूसरी निकाई गुड़ाई आवश्यकतानुसार करनी चाहिए। पेग निकलने की अवधि (35-45 दिनों) के बाद निकाई गुड़ाई नहीं करनी चाहिए।

फसल को बोआई के 45 दिन बाद तक खरपतवार सबसे अधिक नुकसान पहुँचाते हैं। 20-25 दिन की फसल होने तक मूँगफली में निराई-गुड़ाई अवश्य पूरी कर लेनी चाहिये तथा गुच्छा किस्मों के पौधों की जड़ों पर मिट्टी अवश्य चढा़ देनी चाहिए।

- रसायन द्वारा खरपतवार नियत्रंण हेतु बोआई के 1-2 दिन के अन्दर तृण-नाशक दवा ''टोक-ई-25'' की 4 लीटर दवा 300 लीटर पानी में घुलाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करने से 3-4 सप्ताह तक खरपतवारों का प्रकोप रूका रहता है।

प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

ग्रीवा विलगम रोग (कॉलर रॉट) : इस रोग से बचाव हेतु बीजों को 3 ग्राम थाइरम या 2 ग्राम बॉविस्टीन दवा से प्रति कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित करके बोना चाहिये।

टिक्का रोग : इस रोग से बचाव हेतु मेन्कोजेब (डाइथेन एम -45) 0.2 प्रतिशत या बॉविस्टीन 0.05 प्रतिशत दवा को 800-1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टर 15-20 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

प्रमुख कीठ एवं नियंत्रण

सफेद लट

इसके रोकथाम के लिए प्रभावित क्षेत्रों में मई-जून के माह में दो बार खेत की गहरी जुताई करें जिससे परभक्षी चिड़ियों हेतु ग्रब मिट्टी के ऊपर आ जाए। साथ ही साथ बीजों को बोआई पूर्व क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. (1 लीटर/40 कि.ग्रा. बीज दर) से उपचारित करें। बोआई पूर्व फोरेट 10 जी या क्यूनॉलफॉस 5 जी या कार्बोफ्यूरॉन 3 जी 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर की दर से मृदा मिलाना लाभदायक होता है।

दीमक एवं भुवा पिल्लू

इससे फसल को काफी नुकसान होता है। इसके रोकथाम हेतु एन्डोसल्फान 1000 या नुवान 300 मी.ली. की दर से 450 लीटर पानी में घोलकर 15-20 दिनों के अन्तराल पर 2-3 बार स्प्रे करना चाहिए।

कटाई एवं भण्डारण

फसल तैयार होने की अवस्था में फली तोडने पर अन्दर के बीज भूरे होने लगते हैं एवं बीज के उपर का आवरण भी पतली झिल्ली जैसा हो जाता है। फलियों को धूप में 7-10 दिनों तक अच्छी तरह सुखाना चाहिए जिससे नमी 8 से 10 प्रतिशत से कम हो जाए। अधिक नमी होने पर पीली फफूंद (एस्पर्जीलस फ्लेवस) में एफलाटॉक्सिन बनने का खतरा रहता है। फलियों को 6-7 दिनों तक 40°c से कम तापमान पर सुखाना चाहिए। भडारण के दौरान फली छेदक हानि पहुँचाते है। इसलिए भंडारण के स्थान पर डायक्लोरोवास तरल 3 मि.ली. या स्पाइनोसेड 0.5 मि.ली./लि. पानी के साथ घोल बनाकर 5 लीटर प्रति 100 वर्ग मीटर क्षेत्र में छिड़काव करनी चाहिए। सूखी हुई फलियों को साफ करके बोरों में रखना चाहिये। बोरों को लकड़ी के तख्तों पर रखना चाहिये जिससे वे नमी और चूहों से बचे रहें।

सूरजमुखी की उन्नत कृषि प्रणाली

सूरजमुखी एक महत्वपूर्ण तेलहनी फसल है। पिछले कुछ वर्षों से अपनी उत्पादन क्षमा व अधिक मूल्य के कारण सूरजमुखी की खेती किसानों में दिनों-दिन लोकप्रिय होती जा रही है। सूरजमूखी को बड़े पैमाने पर उगाने से न केवल खाद्य तेल उपलब्ध होगा बल्कि विदेशी मुद्रा की भी बचत होगी। सूरजमुखी जल्दी पकने वाली फसल है, सूखा को सहन कर सकती है, तापमान एवं प्रकाश के प्रति असंवेदनशील है अतः सूरजमुखी को खरीफ, रबी एवं जायद मौसम में मधुमक्खी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होती है, जो इसी पैदावार के लिए बहुत महत्वपूर्ण होती है इसके तेल से वनस्पति घी एवं बीमारियों के उपचार के लिए बहुत उपयोगी है।

जलवायु और भूमि

सूरजमुखी की खेती खरीफ रबी जायद तीनो मौसम में की जा सकती है। फसल पकते समय शुष्क जलवायु की अति आवश्यकता पड़ती है। सूरजमुखी की खेती अम्लीय एवं क्षारिय भूमि को छोड़कर सिंचित दशा वाली सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है। लेकिन दोमट भूमि सर्वोतम मानी जाती है।

प्रजातियाँ

इसमें मुख्य रूप से दो प्रकार की प्रजातियाँ पायी जाती है। एक तो सामान्य या संकलु प्रजातियाँ इसमें मार्डन और सूर्य पायी जाती है। दूसरा संकर प्रजातियाँ इसमे के बी. एस.एच-1 और एस.एच. 3322 एवं एफ.एस.एच-17 पाई जाती है। डी. आर. एस.एफ - 108 (ओ. पी.किस्म), **परिपकवता** - 90-95 दिन (खरीफ) एवं 95 - 100 दिन (रबी) **औसत उपज -** 10-12 किवं/ हे. तेल की मात्रा - 36-39%, **के.बी.एस.एच. - 44** (संकर किस्म) फसल की अवधि - 95-100 दिन औसत उपज - 15-16 क्विं/हे. तेल की मात्रा - 35-38% होती है।

सूरजमुखी के खेत की तैयारी

सूरजमुखी की अच्छी पैदावार लेने के लिए खेत में अच्छी नमी एवं मिट्टी का भूरभूरा होना बहुत जरूरी है। सिंचित भूमि में पहली जुताई खूड़कार/मिट्टी पलट हल से बाद दो जुताई डिस्क हैरो या देशी हल से कर खेत तैयार करते हैं।

बुवाई का समय

सूरजमुखी की बुवाई का सर्वोत्तम समय फरवरी का दूसरा पखवारा है इस समय बुवाई करने पर मई के अंत पर जून के प्रथम सप्ताह तक फसल पक कर तैयार हो जाती है, यदि देर से बुवाई की जाती है तो पकाने पर बरसात शुरू हो जाती है और दानो नुकसान हो जाता है, बुवाई लाइनों में हल के पीछे 4 से 5 सें.मी. गहराई पर करनी चाहिए। लाइन से लाईन की दूरी 45 से.मी. तथा पौध से पौध की दूरी 15 से 20 से.मी. रखनी चाहिए। खरीफ - 1 जुलाई - 15 जुलाई रबी फसल - 1 अक्टुबर - 15 अक्टुबर बसंत कालीन / गर्मा - 15 फरवरी - 15 मार्च का समय उपयुक्त माना गया है।

सूरजमुखी में बीज की मात्रा

उन्नत किस्मों का 10 कि.ग्रा. (ई.सी. 68415 सी.) तथा संकर किस्मों का 8 से 10 कि.ग्रा. बीज/हे. पर्याप्त होता है।

सूरजमुखी में बीज उपचार एवं बिजाई विधि

सूरजमुखी के बीज शीघ्र अंकुरण व अधिक जमाव तथा अधिक उत्पादन के लिए बीज को चार से छः घण्टे तक भिगोयें ताकि बिजाई से पहले छाया में सुखाकर फरकरा कर लें। बीजोपचार किसी फफूंदनाशी जैसे कैप्टान, थिराम, बैविस्टिन, काबेन्डाजिम आदि से अवश्य कर लें ताकि बीज जनित बीमारी न हो। उन्नत किस्म को कतारों में 45 से.मी. तथा संकर किस्म को 60 से.मी. की दूरी पर बोयें तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 से.मी. रखें। बीज को भूमि की नमी के अनुसार 3-5 से.मी. गहरा बोयें। अधिक उत्पादन के लिए सूरजमुखी को बैड/मेंढ़ों पर लगायें उसमें बीज की गहराई बैड के ऊपरी सतरह से 6-8 से.मी. रखनी चाहिए। पहली सिंचाई बिजाई 2-3 दिन बाद देनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

5 टन सड़ी हुई गोबर खाद प्रति हे. की दर से खेत की अंतिम जुताई के समय अच्छी तरह मिट्टी में बिखेरकर मिला देनी चाहिए।

वर्षाक्षित खेती

वर्षाक्षित खेती के लिए - 40 कि.ग्रा. नेत्रजन 50 कि.ग्रा. फास्फोरस, 50 कि. ग्रा. पोटाश एवं 25 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हे.।

सिंचित खेती

सिंचित खेती के लिए : ओ.पी. किस्म - 40:50:50:25 कि.ग्रा. नेत्रजनःफास्फोरसः पोटाशःसल्फर प्रति हे.।

संकर किस्म : 60:90:60:25 कि.ग्रा. नेत्रजन:फास्फोरस:पोटाश : सल्फर प्रति हे.

जल प्रबंधन

रबी फसल के किए काँतिक अवस्था जैसे - कली प्रवर्त्तन (20-25 दिन बाद) पुस्प प्रर्वतन (55-60 दिन बाद) एवं बीज प्रर्वतन (70-75 दिन बाद) तीन सिंचाई करनी चाहिए। वसन्त कालीन/गरमा फसल के लिए 4-10 सिंचाई 10-15 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए।

निराई एवं गुड़ाई

बुवाई के 20 से 25 दिन बाद पहली सिंचाई के बाद ओट आने के बाद निराई गुड़ाई करना अति आवश्यक है, इससे खरपतवार भी नियंत्रित होते है। रसायनो द्व ारा खरपतवार नियंत्रण हेतु पेंडामेथालिन 30 ई.सी. की 3.3 लीटर मात्रा 600 से 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से बुवाई के 2-3 दिन के अन्दर छिड़काव करने से खरपतवारो का जमाव नहीं होता है।

मिट्टी चढ़ाना

सूरजमुखी की फसल को गिरने से रोकने के लिए मिट्टी चढ़ाना चाहिए जब फसल की ऊंचाई 60-70 से.मी. हो एवं फूल आने से पहले करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

भूमि में नमी संरक्षध व खरपतवारों के नियंत्रण के बिजाई के 2-3 सप्ताह के बाद पहली गुड़ाई करें। इस कार्य के लिए व्हील हो/ब्लेड हो का प्रयोग किया जा सकता है। दूसरी गुड़ाई के 3 सप्ताह के बाद करें। पैण्डीमैथलीन (स्टाम्प) 1 लीटर को 150-200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ के हिसरब से बिजाई के 2-3 दिन बाद स्प्रे करना चाहिए। ध्यान रहे कि खरपतवार नाशक का इस्तेमाल करते समय खेत में थोड़ी नमी का होना आवश्यक है।

सूरजमुखी की कटाई

जब सूरजमुखी फूल/छाता मुड़कर पीला पड़ जाये तो फसल कटाई के लिए तैयार है। छत्ता काटने के बाद उसे धूप में 5-6 दिन सुखा लेना चाहिए। सभी छत्ते एक बार में कटाई के लिए तैयार नहीं होतें। अतः कुट दिन के अन्तराल करके 2-3 बार में काटना चाहिए ताकि दाने का बिखराव नहीं हो। दाने को धूप में उस समय तक सुखाना ठीक रहता है जब तक कि नमी की मात्रा बीज में 5% न हो जाए।

सूरजमुखी की खेती का आर्थिक महत्व

सूरजमुखी का तना, बीज, तेल तथा खल्ली आर्थिक महत्व की चीज है। सूरजमुखी के बीज में 35-45 प्रतिशत तक तेल होता है। इसके तेल में कालेस्टेरोल नहीं होता है। अतः दिल के मरीज के लिए अचछा माना जाता है। यह आसानी से पच भी जाता है। इसका तेल पेन्ट, वारनिश एवं साबुन में इस्तेमाल किया जाता है।

तिल की उन्नत कृषि प्रणाली

तिल मुख्यतः दो प्रकार की होती है : काली तथा सफेद। तिल का प्रयोग मुख्य रूप से तेल निकालने विभिन्न प्रकार के पकवान बनाने, व्रत के समय एवं अनेको प्रकार के सुगंधित तथा औषधीय तेल बनाने में किया जाता है। तिल की खल्ली पशुओं को भी खिलाई जाती है। यह स्वाद में मीठी तथा चिकनी होती है। शीतलता तथा पौष्टिकता के गुणों से भरपूर होने के कारण स्वास्थ्यवर्धक मानी जाती है।

जलवायु

तिल के लिए शीतोषण जलवायु उपयुक्त होती है मुख्यतः बरसात या खरीफ में इसकी खेती की जाती है यह बहुत ही ज्यादा बरसात या सूखा पड़ने पर फसल अच्छी नहीं होती है।

मिट्‌टी

इसके लिए हल्की भूमि तथा दोमट भूमि अच्छी होती है। यह फसल पी.एच. 5.5 से 8.2 तक की भूमि में उगाई जा सकती है।

भूमि की तैयारी

खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा दो-तीन जुताई कल्टीवेटर या देशी हल से करके खेत में पाटा लगाकर मिट्टी को भूरभूरा बना लेना चाहिए। इसके पश्चात् ही बुवाई करनी चाहिए। 80 से 100 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद को आखिरी जुताई में मिला देना चाहिए।

बीज

एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए 5-6 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है। बीज जनित रोगों से बचाव के लिए बुवाई के पूर्व बीज का शोधन करना आवश्यक होता है।

2.5 ग्राम थीरम या कैप्टान प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधन करना चाहिए। साथ ही पानी में ट्राइकोडर्मा नामक दवा मिलाकर बीज ढेर में छिड़काव कर उसे छांव में सूखने दिया जाता है। जैसे ही बीज सूखकर तैयार हो जाता है उसकी बुवाई कर देनी चाहिए।

प्रजातियाँ

क्र.सं.	जातियां	अवधि (दिनों में)	उत्पादन (क्विं प्रति हे.)	तेल की मात्रा प्रतिशत
1.	कांके सफेद	80-85	6-7	47-50
2.	टी.सी.-25	82-85	6-7	46-49
3.	कृष्णा	80-85	6-7	47-50
4.	शेखर	80-85	7-8	• तेल की मात्रा 51% • अबिखरनशील है।

बुआई

तिल की बुवाई का उचित समय मध्य जून से मध्य जुलाई का दूसरा पखवारा माना जाता हैं तिल की बुवाई हल के पीछे लाइन से लाइन 30 से 45 सें.मी. की दूरी पर बीज को कम गहराई पर करते है।

तिल खाने से होने वाले फायदे

- तिल के बीज में उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन एवं आवश्यक अमीनों अम्ल खासकर मिथीयोनिन मौजूद है जो वृद्धावस्था को रोकने में सहायक है।
- तिल में लिनोलिक अम्ल, विटामिन ई.,ए.,बी, बी-2 एवं नायसिन खनिज कैल्सियम तथा फॉस्फोरस पाया जाता है जो स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।
- तिल के तेल में 85% असंतृप्त फैटी एसिड है जिससे कोलेस्ट्रॉल को घटाने की तथा हृदय की कोरोनरी रोग को रोकने में सहायक है।
- तिल के तेल को तेलों की रानी कहा जाता है, क्योंकि इसमें त्वचा रक्षक तथा अन्य प्रसाधन गुण मौजूद है।
- तिल दाँत के रोगों में लाभकारी है। रोज सुबह 10 ग्रा. काला तिल चबा-चबाकर खाने से मसूढ़े स्वस्थ और दाँत मजबूत होते है।

- तिल से आँखों की रोशनी बढ़ाने, कफ, आर्थराइटिस, सूजन, दर्द पीडा को कम करता है।
- तिल के तेल की मालिश से मुहाँसे, चर्म रोग में लाभ मिलता है।

खाद एवं उर्वरक की मात्रा एवं देने की विधि

जमीन की उत्पादकता को बनायें रखने के लिए तथा अधिक उपज पाने के लिए भूमि की तैयारी करते समय अंतिम जुताई के पहले 10 टन प्रति हेक्टेयर के दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद को मिला देना चाहिए। वर्षा पर निर्भर स्थिति में 40:40:20:20 नेत्रजन : स्फुर : पोटाश : सल्फर कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर के दर से देने हेतु सिफारिश की गई है। फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा आधार खाद के रूप में तथा नेत्रजन की आधा मात्रा के साथ मिलाकर बुआई के समय दी जानी चाहिए। नेत्रजन की शेष मात्रा पौधों में फूल निकलने के समय यानी बुआई के 30 दिन बाद दी जा सकती है। रबी मौसम में फसल में सिफारिश की गई उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा आधार रूप में बुआई के समय दी जानी चाहिए। तिलहनी फसल होने के कारण मिट्टी में गंधक तत्व की उपलब्धता फसल के उत्पादन एवं दानों में तेल के प्रतिशत को प्रभावित करती है। अतः फास्फोरस तत्व की पूर्ति सिंगल सुपर फास्फेट उर्वरक द्वारा करना चाहिए। भूमि परीक्षण के उपरांत जमीन में यदि गंधक तत्व की कमी पायी जाती है तो वहाँ पर जिंक सल्फेट 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में तीन साल में एक बार अवश्य प्रयोग करें।

सिंचाई प्रबंधन

वर्षा ऋतु की फसल होने के कारण सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती है। यदि पानी न बरसे तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

निराई-गुड़ाई

बुवाई के पश्चात् जैसे ही फसल ऊपर आती है तो सावधानी बरतते हुए लासो नामक रसायन पाउडर का छिड़काव कर दिया जाता है। इससे खर-पतवार की सम्भावना समाप्त हो जाती है। प्रथम निराई-गुड़ाई बुवाई के 15-20 दिन बाद दूसरी 30-35 दिन बाद करनी चाहिए। निराई-गुड़ाई करते समय थिनिंग या विरलीकरण करके पौधों के आपस की दूरी 10-12 से.मी. कर देनी चाहिए। खर-पतवार नियंत्रण हेतु एलाक्लोर 50 ई.सी. 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर बुवाई के बाद दो-तीन दिन के अन्दर प्रयोग करना चाहिए।

तैयार होने की अवधि

30-40 दिनों में फसल 15 इंच से 18 इंच लंबी हो जाती है तथा इसी के बाद इसके पकने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। 80-90 दिनों के बीच फसल तैयार हो जाती है। जिसकी कटाई की जाती है।

कटाई एवं मड़ाई

तिल की कटाई हाथ से की जाती है। तिल की पत्तियाँ जब पीली हो कर गिरने लगे तब समझना चाहिए की फसल पककर तैयार हो गयी है। इसके पश्चात् कटाई पौधे सहित नीचे से करनी चाहिए। कटाई के बाद बण्डल बनाकर खेत में ही जगह-जगह पर छोटे-छोटे ढेर में खड़े कर देना चाहिए। जब अच्छी तरह से पौधे सूख जावे तब डंडे या छड़ आदि की सहायता से पौधों को पीटकर या हल्का झाड़कर बीज निकाल लेना चाहिए। पहली बार तिल झाड़ने के बाद उसे फिर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है तथा दो-तीन दिन के अंतर में उसे पूरी तरह पौधों से निकाल लिया जाता है।

कीट

1. नियंत्रण हेतु कलियाँ निकलते समय फसल पर डाइमेथोएट 30 ई. सी. या इन्डोसल्फान या मोनोक्रोटोफॉस कीटनाशक दवाई को 1.25 लिटर प्रति हेक्टयेर की दर से छिड़काव करें।
2. तिल की पत्ती मोड़क एवं फल्ली छेदक इल्लियाँ इसे नियंत्रित करने के लिये इन्डोसल्फान अथवा क्विनालफॉस का 1.25 लिटर प्रति हेक्टयेर की दर से फूल आने की अवस्था से आरम्भ कर 15 दिनों के अंतराल से 3 बार छिड़काव करें।
3. तिल हाक माथ इल्लियाँ पौधों की सभी पत्तियाँ खाती है। नियंत्रण हेतु इल्लियाँ को हाथ से निकालकर नष्ट करें। कार्बोरिल का 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टयेर के दर से खड़ी फसल में भुरकाव करना चाहिए।

अलसी की उन्नत कृषि प्रणाली

लसी बहुमूल्य औद्योगिक तिलहन फसल है। अलसी की खली दूध देने वाले जानवरों के लिये पशु आहार के रूप में उपयोग की जाती है तथा खली में विभिन्न पौध पोषक तत्वों की उचित मात्रा होने के कारण इसका उपयोग खाद के रूप में किया जाता है।

हमारे देश में अलसी की खेती लगभग 2.96 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में होती है जो विश्व में द्वितीय स्थान है उत्पादन में तीसरा तथा उपज प्रति हेक्टेयर में आठवाँ स्थान रखता है।

अलसी को शुद्ध फसल मिश्रित फसल उतेरा (पैरा) फसल के रूप में उगाया जाता है। देश में हुये अनुसंधान कार्य यह सिद्ध करते हैं, कि अलसी की खेती उचित प्रबन्धन के साथ की जाय तो उपज में लगभग 2 से 2.5 गुनी वृद्धि संभव है। किसी तरह की परिस्थिति आपके खेत की हो यानी सीमित सिंचाई तो उपलब्ध है किंतु सुरक्षा (विशेषकर पशुओं से) नहीं है तो इसके लिए सबसे उत्तम विकल्प अलसी की फसल है। अलसी के खेत को पशु चरकर नुकसान नहीं करते क्योंकि इसके पौधों के तने में सेल्यूलोज युक्त एक विशेष रेशा पाया जाता है।

जलवायु

अलसी की फसल को ठंडे व शुष्क जलवायु की आवश्यकता पड़ती है। अतः अलसी भारत वर्ष में

अधिकतर रबी मौसम में वार्षिक वर्षा 45-50 सेटीमीटर प्राप्त होती है वहां इसकी खेती सफलता पूर्वक की जा सकती है। अलसी के उचित अंकुरण हेतु 25-30 डिग्री सें.ग्रे.तापमान तथा बीज बनते समय तापमान 15-20 डिग्री सें.ग्रे. होना चाहिए। अलसी के वृद्धि काल में भारी वर्षा व बादल छाये रहना बहुत ही हानिकारक साबित होते हैं। परिपक्व अवस्था में उच्च तापमान कम नमी तथा शुष्क वातावरण की आवश्यकता होती है।

भूमि का चुनाव

अलसी की फसल के लिये काली भारी एवं दोमट मिट्टी अच्छी होती हैं। अधिक उपजाऊ मृदाओं की अपेक्षा मध्यम उपजाऊ मृदायें अच्छी समझी जाती हैं। भूमि में उचित जल निकास का प्रबंध होना चाहिए। आधुनिक संकल्पना के अनुसार उचित जल एवं उर्वरक व्यवस्था करने पर किसी भी प्रकार की मिट्टी में अलसी की खेती सफलता पूर्वक की जा सकती है।

खेत की तैयारी

अल्सी के अच्छी अंकूरण के लिए भूरभूरा एवं खर-पतवार रहित होना चाहिए। बीज के अंकुरण और उचित पौध वृद्धि के लिए आवश्यक है कि बुआई से पूर्व भूमि को अच्छी प्रकार से तैयार कर लिया जाए। धान की फसल कटाई पश्चात् खेत को मिट्टी पलटने वाले हल से एक बार जोतने के पश्चात् 2-3 बार देशी हल या हैरो चलाकर भूमि तैयार की जाती है। जुताई के बाद पाटा चलाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए जिससे भूमि में नमी संचित हो सके।

उन्नत किस्में

अलसी की देशी किस्मों की उपज क्षमता कम होती है क्योंकि इन पर कीट तथा रोगों का प्रकोप अधिक होता है। अतः अधिकतम उपज लेने के लिए देशी किस्मों के स्थान पर उन्नत किस्मों के प्रमाणित बीज का उपयोग करना चाहिए अन्यथा भरपूर उपज नहीं मिल सकेगी।

दिव्या (सिंचित) : परिपकवता अवधि 128-130 दिन उपज क्षमता 15-16 क्विं/हे. तथा तेल की मात्रा 42 प्रतिशत।

प्रियम (असिंचिंत) : परिपक्वता अवधि 125-128 दिन। औसत उपज 12-13 किवं/हें एवं तेल की मात्रा - 40 प्रतिशत।

बिरसा तीसी 2 : फसल की अवधि 127- 128 दिन औसत उपज 12-13 किवं/हे. एवं तेल की मात्रा 43 प्रतिशत।

टी 397 : भुरा एवं छोटा बीज, मध्यम एवं नीले रंग के फूल, फसल तैयार होने की अवधि 125 दिन, सिंचित अवस्था में औसत उपज 800 किलोग्राम प्रति हेक्टर तथा तेल की मात्रा 44ः होती है।

श्वेता : भूरा एवं छोटा बीज, मध्यम एवं सफेद रंग के फूल, फसल तैयार होने की अवधि 135 दिन, औसत उपज 900 किलोग्राम प्रति हेक्टर तथा तेल की मात्रा 44 : होती है।यह सिंचित व असिंचित खेती के लिए उपयुक्त है।

दीपिका : फसल तैयार होने की अवधि 112-115 दिन औसत उपज 12-13 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा बीज में तेल का अंश 42ः होता है। अनुमोदित उर्वरक देने पर 20-44 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज देती है। इसके बीज मध्यम आकार के होते हैं। यह अर्द्ध-सिंचित व उतेरा (पैरा) खेती के लिए उपयुक्त है। यह किस्म म्लानि (विल्ट) और रतुआ (रस्ट) रोगों के मध्यम प्रतिरोधक है।

इंदिरा अलसी 32 : फसल तैयार होने की अवधि यह 115-122 दिन जिससे 10-12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है। बीज हल्के कत्थई रंग के मध्यम रोधी परन्तु म्लानि आल्टरनेरिया झुलसा रोगों के प्रति सहिष्णु किस्म है। असिंचित दशा और उतेरा के लिए के लिए उपयुक्त है।

आरएलसी-76 : फसल तैयार होने की अवधि 115-125 दिन तथा औसतन 12-14 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। इसके बीज हल्के कत्थई रंग तथा मध्यम आकार के होते हैं। यह रतुआ म्लानि व चूर्णिला आसिता रोग प्रतिरोधक किस्म है।

आरएलसी-92 : यह किस्म 115-125 दिन में पक कर तैयार हो जाती है तथा औसतन 12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। इसके बीज कत्थई रंग तथा

बड़े होते हैं। बीज में तेल 42% तक पाया जाता है। यह चूर्णिल आसिता, म्लानि रोग प्रतिरोधी व वड फ्लाई कीट सहनशील है। देर से बोने व उतेरा खेती हेतु उपयुक्त किस्म है।

अलसी की अन्य उन्नत किस्मों की विशेषताएं

जवाहर-17 (आर.17) : इसका फूल नीला बीज बड़ा तथा बादामी रंग का होता है। इसमें फूल कम समय में एक साथ निकलते हैं और पौधे भी एक साथ पककर तैयार हो जाते हैं। अलसी की मक्खी से इसको कम नुकसान तथा गेरूआ रोग का भी असर नहीं होता है। यह जाति 125-130 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसमें तेल की मात्रा 46.3 प्रतिशत होती है। प्रति हेक्टेयर पैदावार 10-11 क्विंटल होती है।

जवाहर - 552 : यह किस्म 125-130 दिन में पककर तैयार होती है जिसकी उपज क्षमता 9-10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। इसके बीज में 44% तेल पाया जाता है।

द्वि-उद्देश्य (दाना व रेशा) वाली उन्नत किस्में

जीवन : यह किस्म 177 दिन में तैयार होकर 10.90 क्विंटल रेशा प्रति हेक्टेयर तक देती है।

गौरव : यह किस्म 137 दिन मे पक कर तैयार होती है औसतन 10.50 क्विंटल बीज और 9.50 क्विंटल रेशा प्रति हेक्टेयर देती है।

फसल पद्धति

एकल एवं मिश्रित खेती

अलसी की खेती वर्षा आधारित क्षेत्रों से खरीफ फसल के बाद रबी में शुद्ध फसल के रूप में की जाती है। अनुसंधान परिणाम यह प्रदर्शित करते हैं कि सोयाबीन-अलसी व उरद-अलसी आदि फसल चक्रों से अधिक लाभ लिया जा सकता है। इसी प्रकार एकल फसल के बजाए अलसी की चना+अलसी (4:2) सह फसल के रूप में ली जा सकती है। अलसी की सह फसली खेती मसूर व सरसों के साथ भी की जा सकती है।

उतेरा (पैरा) पद्धति

असली की उतेरा पद्धति धान लगाये जाने वाले क्षेत्रों में प्रचलित है। इस पद्धति में धान की खड़ी फसल में अलसी के बीज को छिंटक दिया जाता है। फलस्वरूप धान की कटाई पूर्व ही अलसी का अंकुरण हो जाता है। संचित नमी से ही अलसी की फसल पककर तैयार हो जाती है।

बुवाई का समय - इस के बोने का उपयुक्त समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर के तक है। इसको बोते समय खेत में नमी होना मौसम में कुछ ठंडक होना आवश्यक है। इन दोनों के बीच सामंजस्य होना आवश्यक है। बहुत जल्दी बोने पर गरमी व अधिक नमी में पौधे के अंकुरणशील बीज को नुकसान हो सकता है या नवजात पौधे सूख जाते हैं।

बीजदर एवं दूरी - 20-25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। इसकी बुआई में पंक्तियों के बीच की दूरी 30 से.मी. पौधे से पौधे दूरी 10 सें.मी पर कतारों में करें। बीज छोटा होने के कारण अधिक गहराई में नहीं जाना चाहिए। बीज को 3-4 सें.मी. से ज्यादा गहरा नहीं बोएँ।

उतेरा (पैरा) पद्धति के लिये : असिंचित व उटेरा

- उक्त पद्धति हेतु 25-30 कि.ग्रा. बीज/हेक्टेयर की दर उपयुक्त है।

बीजोपचार

बुवाई से पूर्व बीज को कार्बेन्डाजिम की 2.5 से 3 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिये अथवा ट्राइकोडरमा विरीडी की 5 ग्राम मात्रा से प्रति किलाग्रोम बीज को उपचारित कर बुवाई करनी चाहिये। फसल को रोगों से छुटकारा के लिए 2 ग्राम बेविस्टीन या 3 ग्राम थीरम अथवा 3 ग्राम केपटान कवकनाशी से प्रति किलोग्राम बीज को उपचारित कर बोयें।

उवर्रक की मात्रा

तीसी की खेती के लिए किसान जैविक खाद या गोबर खाद या उर्वरक का प्रयोग नहीं करते हैं। जिसके अभाव में पौधों को उचित मात्रा में पोषक तत्व नहीं मिल पाता है। अंततः पौधों का विकास ठीक से नहीं होता है और उपज में भारी कमी आ जाती है। गोबर खाद 5 टन प्रति हैक्टर की दर से देना चाहिए जिससे 25% उर्वरक का बचत हो जाता है। असिंचित अवस्था में नेत्रजन 30 किलोग्राम, स्फुर 20 किलोग्राम, पोटाश 20 किलोग्राम और सल्फर 20 किलोग्राम प्रति हैक्टर बोआई के समय ही देना चाहिए। सिंचित अवस्था में नेत्रजन 60 किलोग्राम, स्फुर 40 किलोग्राम, पोटाश 20 किलोग्राम तथा सल्फर 20 किलोग्राम

प्रति हेक्टर डालना चाहिए। सिंचित अवस्था में नेत्रजन की आधी मात्रा, स्फुर पोटास एवं गंधक की पूरी मात्रा बोआई के समय डालें। नेत्रजन की शेष मात्रा बोआई के 30-35 दिनों बाद पहली सिंचाई के बाद टापड्रेसिंग के द्वारा डालें। पैरा खेती के लिए धान की फसल कटने के बाद खेत में पर्याप्त नमी रहने पर 25 किलोग्राम नेत्रजन प्रति हेक्टर की दर से बोआई के 25-30 दिन बाद यूरिया द्वारा टापड्रेसिंग करें। स्फुर की मात्रा सिंगल सुपर फास्फेट या IFFCO (20:20 :0:13) के द्वारा दें जिसमें गंध भी होता है।

जैव उर्वरक

अलसी में भी एजोटोबैक्टर/एजोस्पाईरिलम और स्फुर घोलक जीवाणु आदि जैव उर्वरक उपयोग किये जा सकते है।। बीज उपचार हेतु 10 ग्राम जैव उर्वरक प्रति किलो ग्राम बीज के हिसाब से अथवा मृदा उपचार हेतु 5 किलोग्राम/ हे. जैव उर्वरकों की मात्रा को 50 कि.ग्रा. भुरभुरे गोबर की खाद के साथ मिला कर अंतिम जुताई के पहले खेत मे बराबर बिखेर देना चाहिये।

खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार प्रबंधन के लिये बुवाई के 20 से 25 दिन पश्चात पहली निकाई एवं 40-45 दिन पश्चात दूसरी निकाई-गुड़ाई करनी चाहिये। अलसी की फसल में रासायनिक विधि से खरपतवार प्रबंधन हेतु पेन्डामेथिलिन 2 लिटर प्रति हेक्टेयर को बुवाई के पश्चात खेत में छिडकाव करें। खेत की अंतिम तैयारी के समय फ्लूक्लोरेलिन 45 ई.सी. नामक कवकनाशी का उपयोग 2 ली./हें या एलाक्लोर 50 ई.सी. 2 ली./हे. की दर से बुआई के 2 दिन के अंदर छिड़काव करना लाभदायक है।

जल प्रबंधन

अलसी के अच्छे उत्पादन के लिये विभिन्न अवस्थाओं पर 2 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। यदि दो सिंचाई उपलब्ध हो तो प्रथम सिंचाई के एक माह बाद द्वितीय सिंचाई फल आने से पहले करना चाहिये। सिंचाई के साथ-साथ प्रक्षेत्र में जल निकास का भी उचित प्रबंध चाहिये। प्रथम एवं द्वितीय सिंचाई क्रमशः 30-35 व 60 से 65 दिन की फसल अवस्था पर करें।

प्रमुख रोग

1-गेरूआ (रस्ट) रोग

यह रोग मलेम्पसोरा लाइनाई नामक फफूंद से होता है। रोग का प्रकोप प्रारंभ होने पर चमकदार नारंगी रंग के धब्बे पत्तियों के दोनों ओर बनते हैं, धीरे धीरे

यह पौधे के सभी भागों में फैल जाते हैं। रोग नियंत्रण हेतु रोगरोधी किस्में को लगायें। रसायनिक दवा के रूप में टेबूकोनाजोल 2 प्रतिशत 1 ली.प्रति हेक्टे. की दर से या (केप्टान+हेक्साकोनाजोल) के 500-600 ग्राम मात्रा को 300 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2-उकठा (विल्ट)

यह अलसी का प्रमुख हानिकारक मृदा जनित रोग है इस रोग का प्रकोप अंकुरण से लेकर परिपक्वता तक कभी भी हो सकता है। रोग ग्रस्त पौधों की पत्तियों के किनारे अन्दर की ओर मुड़कर मुरझा जाते हैं इस रोग का प्रसार प्रक्षेत्र में पड़े फसल अवशेषों द्वारा होता है। इसके रोगजनक मृदा में उपस्थित फसल अवशेषों तथा अनुकूल वातावरण में पौधों पर संक्रमण करते हैं। उन्नत प्रजातियों को लगावें।

3-चूर्णिल आसिता (भभूतिया रोग)

इस रोग के संक्रमण की दशा में पत्तियों पर सफेद चूर्ण सा जम जाता है। रोग की तीव्रता अधिक होने पर दाने सिकुड़ कर छोटे रह जाते हैं। देर से बुआई करने पर एवं शीतकालीन वर्षा होने तथा अधिक समय तक आर्द्रता बनी रहने की दशा में इस रोग का प्रकोप बढ़ जाता है। उन्नत जातियों को बोयें। कवकनाशी के रूप मे थायोफिनाईल मिथाईल 70 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.300 ग्राम प्रति हेक्टे.की दर से छिड़काव करना चाहिए।

4-(आल्टरनेरिया) अंगमारी

इस रोग से अलसी के पौधे का समस्त वायुवीय भाग प्रभावित होता है परंतु सर्वाधिक संक्रमण पुष्प एवं पत्तियों पर दिखाई देता है। फूलों की पंखुडियों के निचले हिस्सों में गहरे मेरू रंग के लम्बवत धब्बे दिखाई देते हैं अनुकूल वातावरण में धब्बे बढ़कर फूल के अन्दर तक पहुँच जाते हैं जिसके कारण फूल निकलने से पहले ही सूख जाते है।। इस प्रकार रोगी फूलों में दाने नहीं बनते हैं। उन्नत जातियों की बोआई करें। (केप्टान+हेक्साकोनाजोल) का 500-600 ग्राम मात्रा को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

समन्वित रोग प्रबंधन

- प्रक्षेत्र की जुताई से पहले फसल अवशेषों को इकट्ठा कर जला देना चाहिये।
- मिट्टी में रोग जनकों के निवेश को कम करने के लिये 2-3 वर्ष का फसल चक्र अपनाना चाहिये।
- अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से लेकर नवम्बर के मध्य तक बुवाई कर देना चाहिये।
- बीजों को बुवाई से पहले कार्बेन्डाजिम 3 ग्राम की दर से प्रति किलोग्राम बीज को उपचारित करना चाहिये।
- फसलों की 0.25 प्रतिशत (2.5 ग्राम/ली.पानी) अथवा कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति ली.पानी में घोल कर छिडकाव लाभप्रद होता है।
- रोग के प्रति सहनशील अथवा प्रतिरोधी प्रजातियों का चयन कर बुआई करना चाहिये।

अलसी के प्रमुख कीट

फली मक्खी (बड फ्लाई)

यह प्रौढ़ आकार में छोटी तथा नारंगी रंग की होती है। जिनके पंख पारदर्शी होते हैं। इसकी इल्ली ही फसलों को हानि पहुँचाती है। इल्ली अण्डाशय को खाती है जिससे कैप्सूल एवं बीज नहीं बनते हैं। मादा कीट 1 से 10 तक अण्डे पंखुड़ियों के निचले हिस्से में रखती है। जिससे इल्ली निकल कर फली के अंदर जनन अंगो विशेषकर अण्डाशयों को खा जाती है। जिससे फली पुष्प के रूप मे विकसित नहीं होती है तथा कैप्सूल एवं बीज का निर्माण नहीं होता है। नियंत्रण के लिये ईमिडाक्लोरोप्रिड 17.8 एस.एल. 100 मिली./हेक्ट. की दर से 500-600 ली. पानी में छिड़काव करें।

अलसी की इल्ली

प्रौढ़ कीट मध्यम आकार के गहरे भूरे रंग या धूसर रंग का होता है, जिसके अगले पंख गहरे धूसर रंग के पीले धब्बे युक्त होते है। पिछले पंख सफेद, चमकीले, अर्धपारदर्शी और बाहरी सतह धूसर रंग की होती है। इल्ली लम्बी भूरे रंग की होती है। पौधे के उपरी भाग में पत्तियों से चिपककर पत्तियों के बाहरी भाग को खाती है। इस कीट से ग्रसित पौधों की बढ़वार रूक जाती है।

अर्ध कुण्डक इल्ली

इस कीट का प्रौढ़ शलभ के अगले पंख पर सुनहरे धब्बे होते है। इल्ली हरे रंग की होती है जो प्रारंभ में मुलायम पत्तियों तथा फलियों के विकास होने पर फलियों को खाकर नुकसान पहुँचाती है।

अलसी या चने की इल्ली

इस कीट का प्रौढ़ भूरे रंग का होता है जिनके अगले पंखों पर सेम के बीज के आकार के काले धब्बे होते है।। इल्लियों के रंग में विविधता पाई जाती है जैसे यह पीले, हरे, नारंगी, गुलाबी, भूरे या काले रंग की होती है। शरीर के पार्श्व हिस्सों पर हल्की एवं गहरी धारियाँ होती है। छोटी इल्ली पौधे के हरे भाग को खुरचकर खाती है बड़ी इल्ली फूलों एवं फलियों को नुकसान पहुँचाती है।

समन्वित कीट प्रबंधन तकनीकी

- ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई से मृदा में स्थित फली मक्खी की सूंडी तीव्र धूप के सम्पर्क में आकर नष्ट हो जाती है।
- कीटों से सहनशील प्रजातियों का चुनाव बुवाई हेतु करना चाहिये।
- अलसी के साथ चना (2:4) अथवा सरसों (5:1) की अतंवर्तीय खेती करने से फली बेधक कीट का संक्रमण कम हो जाता है।
- उर्वरक की मात्रा (60-50 कि.ग्रा. नेत्रजन, 40 किग्रा स्फूर तथा 20 कि. ग्रा. पोटाश) का प्रति हेक्टेयर की दर से सिंचित अवस्था में प्रयोग करना चाहिये। बाँस की टी के आकार की 2.5 से 3 फीट ऊँची 50 खँटियों को प्रति हेक्टेयर में लगाने से कीटों को उनके प्राकृतिक शत्रु चिड़ियों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है।
- प्रकाश प्रपंच का उपयोग कर कीड़ों को आकर्षित कर एकत्र कर नष्ट कर दें।

- नर कीटों को आकर्षित करने तथा एकत्र करने हेतु फेरोमोन ट्रैप का प्रति हेक्टेयर की दर से 10 ट्रैप का प्रयोग लाभप्रद होता है।
- जब फली मक्खी की संख्या आर्थिक क्षति स्तर (8-10 प्रतिशत कली संक्रमित) से उपर पहुँच जाय तो एसिफेट या प्रोफेनोफॉस अथवा क्विनालफॉस 2 मि. ली. मात्रा/ली.पानी के घोल का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव लाभपद्र होगा।

कटाई गहाई एवं भण्डारण

जब फसल की पत्तियाँ सूखने लगें, कैप्सूल भूरे रंग के हो जायें और बीज चमकदार बन जाय तब फसल की कटाई करनी चाहिये। बीज में 70 प्रतिशत तक सापेक्ष आर्दता तथा 8 प्रतिशत नमी की मात्रा भडांरण के लिये सर्वोत्तम है।

सूखे तने से रेशा प्राप्त करने की विधि

- फसल की कटाई भूमि स्तर से करें। बीजों की मड़ाई करके अलग कर लें तत्पश्चात तने को जहाँ से शाखाएँ फूटी हों, काटकर अलग करें फिर कटे तने को छोटे-छोटे बण्डल बनाकर रख लें।

- अब सूखे कटे तने बण्डल को सड़ाने के लिये अलग रखें। तनो को सड़ाने के लिये निम्नलिखित विधि अपनायें रखें।
- सूखे तने के बण्डलों को पानी से भरे टैंक में डालकर 2-3 दिन तक छोड़ दें।
- सड़े तने के बण्डल को 8-10 बार टैंक के पानी से धोकर खुली हवा में सूखने दें। अब तना रेशा निकालने योग्य हो गया है। रेशा निम्न प्रकार से निकाला जा सकता है-

अ. हाथ से रेशा निकालने की विधि

अच्छी तरह सूखे सड़े तने को मुगरी से पीटिए-कूटिए। इस पकार तने की लकड़ी टूटकर भूसा हो जायेगी जिसे झाड़कर व साफ कर रेशा आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

ब. यांत्रिकी विधि (मशीन से रेशा निकालने की विधि)

- सूखे सड़े तने के छोटे-छोटे बण्डल मशीन के ग्राही सतह पर रख कर मशीन चलाते हैं इस प्रकार मशीन से दबे/पिसे तने मशीन के दूसरी तरफ से बाहर होते रहते हैं।
- मशीन से बाहर हुये दबे/पिसे तने को हिलाकर एवं साफकर रेशा प्राप्त कर लेते हैं।
- यदि तने की पिसी लकड़ी एक बार में पूरी तरह रेशे से अलग न हो तो पुनःउसे मशीन में लगाकर तने की लकड़ी को पूरी तरह से अलग कर लें।

तेलहन फसलों के लिए
ऑयल एक्सप्लोरर

0461_02_2024_PAT - 9334423608

संपादक मण्डल

संपादक : श्री विकास कुमार, निदेशक, समेति, झारखण्ड

सह संपादक : श्री अभिषेक तिर्की, उप निदेशक, (कृ.प्र.प्र.) समेति, झारखण्ड

: श्रीमती कुमुद कुमारी, उप निदेशक, (कृषि संबद्ध) समेति, झारखण्ड

सहयोग एवं सकंलन : श्री हर्षराज मिश्रा, प्र.त.प्र., गढ़वा, प्रतिनियुक्त समेति, झारखण्ड

: श्री संजय कुमार श्रीवास्तव, प्र.कृ.प., पाटन, पलामू, प्रतिनियुक्त समेति, झारखण्ड

: श्री विजय आलोकित रूण्डा, स.त.प्र., लोहरदगा प्रतिनियुक्त, समेति, झारखण्ड

: श्री अंकित कुमार पाण्डेय, स.त.प्र., पलामू प्रतिनियुक्त, समेति, झारखण्ड

: श्री नजिरूल अंसारी, स.त.प्र., गुमला प्रतिनियुक्त, समेति, झारखण्ड

: श्री राकेश कुमार, स.त.प्र., सरायकेला प्रतिनियुक्त, समेति, झारखण्ड

टंकन एवं साज-सज्जा : श्री परशु राम, कम्प्यूटर ऑपरेटर, समेति, झारखण्ड